न्यायालयों में सुधार की आवश्यकता

इस Editorial में The Hindu, Indian Express, Business Line आदि में प्रकाशित लेखों का विश्लेषण किया गया है, जो भारत की न्यायपालिका से संबंधित है इस आलेख में न्यायतंत्र से संबंधित समस्याओं और उसके समाधान की चर्चा तथा आवश्यकतानुसार यथास्थान टीम दृष्टि के इनपुट भी शामिल किये गए हैं।

संदर्भ

हाल ही में भारत के मुख्य न्यायाधीश ने न्यायालय से संबंधित समस्याओं का मुद्दा उठाया है। उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री को जो चिट्ठी लिखी है जिसमें उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर उच्चतम न्यायाधीशों के समान 65 वर्ष करने तथा न्यायालयों में रिक्त पदों को शीघ्र भरने का अनुरोध किया है। मुख्य न्यायाधीश के अनुरोध ने एक बार फिर से न्यायालयों में सुधारों संबंधी बहस को बल दे दिया है। ज्ञात हो कि 2 वर्ष पूर्व मुख्य न्यायाधीश टी. एस. ठाकुर भी इस तरह के सुधारों को लेकर चिंता व्यक्त कर चुके हैं।

भारत में न्यायालय में सुधार की मांग का लंबा इतिहास रहा है लेकिन न्यायालय की स्वतंत्रता को ध्यान में रखकर ऐसे सुधारों को क्रियान्वित नहीं किया जा सका है। कुछ वर्ष पूर्व ही संसद ने न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्तियों एवं स्थानांतरण में पारदर्शिता लाने के लिये संविधान में संशोधन करके **राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (NJAC)** का गठन किया था। लेकिन न्यायालय के स्वायत्तता के मुद्दे पर उच्चतम न्यायालय ने इसको संविधान के अनुसार असंगत मानकर निरस्त कर दिया था। इतिहास में ऐसे बहुत से प्रयास किये गए है। वर्तमान में न्यायालय में लंबित मामलों की बढ़ती संख्या के कारण फिर से सुधारों की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

वर्तमान में न्यायालय के समक्ष निम्नलिखित समस्याएँ मौजूद हैं-

न्यायालय में लंबित मामले

सरकारी आँकड़ों के अनुसार, उच्चतम न्यायालय में 58,700 तथा उच्च न्यायालयों में करीब 44 लाख और ज़िला अदालतों तथा निचली अदालतों में लगभग तीन करोड़ मुकदमे लंबित हैं। इन कुल लंबित मामलों में से 80 प्रतिशत से अधिक मामले ज़िला और अधीनस्थ न्यायालयों में हैं। इसका मुख्य कारण भारत में न्यायालयों की कमी, न्यायाधीशों के स्वीकृत पदों का कम होना तथा पदों की रिक्तता का होना है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर देश में प्रति 10 लाख लोगों पर केवल 18 न्यायाधीश हैं। विधि आयोग की एक रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी कि प्रति 10 लाख जनसंख्या पर न्यायाधीशों की संख्या तकरीबन 50 होनी चाहिये। इस स्थिति तक पहुँचने के लिये पदों की संख्या बढ़ाकर तीन गुना करनी होगी।

पारदर्शिता का अभाव

भारत में न्यायिक व्यवस्था से जुड़ी एक मुख्य समस्या पारदर्शिता का अभाव है। न्यायालयों में नियुक्ति, स्थानांतरण में पारदर्शिता को लेकर सवाल उठते रहे है। वर्तमान में कॉलेजियम प्रणाली के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं उनका स्थानांतरण किया जाता है। **कॉलेजियम प्रणाली** में उच्चतम न्यायालय के संबंध में निर्णय के लिये मुख्य न्यायाधीश सहित 5 वरिष्ठतम न्यायाधीश होते है। वहीं उच्च न्यायालय के संबंध में इनकी संख्या 3 होती है। इस प्रणाली की क्रियाविधि जटिल और अपारदर्शी होने के कारण सामान्य नागरिक की समझ से परे होती है। ऐसी स्थिति में इस प्रणाली को पारदर्शी बनाने के लिये संसद द्वारा NJAC के माध्यम से असफल प्रयास किया जा चुका है। भारत के संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रावधान है, जिसमें जानने का अधिकार भी शामिल है। इसको ध्यान में रखते हुए कोई भी ऐसी प्रणाली जो अपारदर्शी हो उसको नागरिकों के अधिकारों की पूर्ति के लिये पारदर्शी बनाया जाना चाहिये।

न्यायालयों में भ्रष्टाचार

किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जवाबदेहिता एक आवश्यक पक्ष होता है। इसको ध्यान में रखते हुए सभी सार्वजनिक पदों पर स्थित व्यक्तियों का उत्तरदायित्त्व निश्चित किया जाता है। भारत में भी विधायिका और कार्यपालिका के संबंध में कई कानूनों एवं चुनावी प्रक्रिया द्वारा उत्तरदायित्व सुनिश्चित किये गए हैं, लेकिन न्यायपालिका के संदर्भ में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटाने का एक मात्र उपाय सिर्फ महाभियोग ही होता

है। ज्ञात हो कि अभी तक किसी भी न्यायाधीश पर महाभियोग की कार्यवाही नहीं की गई है। हालाँकि अभी कुछ समय पहले ही में भारत के मुख्य न्यायाधीश ने एक न्यायाधीश को जाँच में कदाचार का दोषी पाए जाने के बाद उसके पद से हटाने के लिये प्रधानमंत्री से अनुरोध करने संबंधी मामला प्रकाश में रहा। न्यायालय के संबंध में ऐसी कोई माध्यमिक व्यवस्था नहीं है, जिससे न्यायालय स्वयं ही न्यायाधीशों से जुड़े कदाचार के मामले में उचित कार्यवाही कर सके।

न्याय में देरी तथा विचाराधीन कैदियों की समस्या

अंग्रेज़ी की कहावत '**न्याय में देरी न्याय से वंचित होने के समान है**' (Justice Delayed is Justice Denied) भारतीय संदर्भ में चरितार्थ होती है। भारत के सभी न्यायालयों में लगभग 3 करोड़ मामले लंबित है, इनमें से कई मामले लंबे समय से लंबित हैं। मामलों का लंबित होना पीड़ितों और ऐसे लोगों, जो किसी मामले के चलते जेल में कैद है किंतु उनको दोषी करार नहीं दिया गया है, दोनों के दृष्टिकोण से अन्याय को जन्म देता है। पीड़ितों के मामले में कुछ ऐसे संदर्भ भी रहे हैं जब आरोपी को दोषी ठहराए जाने में 30 वर्ष तक का समय लगा, हालाँकि तब तक आरोपी की मृत्यु हो चुकी थी। तो वहीं दूसरी ओर भारत की जेलों में बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विचाराधीन कैदी बंद है, जिनके मामले में अब तक निर्णय नहीं दिया जा सका है। कई बार ऐसी स्थिति भी आती है जब कैदी अपने आरोपों के दंड से अधिक समय कैद में बिता देते है। साथ ही इतने वर्ष जेल में रहने के पश्चात् उसे न्यायालय से आरोप मुक्त कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति न्याय की दृष्टि से अन्याय को जन्म देती है। इस स्थिति में त्वरित सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

//

न्यायालयों के प्रति विश्वास में कमी

भारत की न्यायिक प्रक्रिया अधिक जटिल एवं लंबी होने के कारण न्यायालय के प्रति लोगों के विश्वास में कमी आई है। जहाँ एक ओर इससे न्याय व्यवस्था के औचित्य पर प्रश्न चिह्न लगता है तो वहीं दूसरी ओर मामलों की सुनवाई में अधिक धन भी खर्च होता है, जिससे वंचित समुदायों के लिये इसकी पहुँच दुष्कर हो जाती है। ऐसी स्थिति में न्यायालय के प्रति लोगों के विश्वास में कमी आती है।

उपर्युक्त समस्याओं ने भारतीय न्यायिक व्यवस्था के समीप संकट की स्थिति को जन्म दिया है। स्पष्ट रूप से समय रहते इन समस्याओं को दूर करना अत्यंत आवश्यक है। न्यायपालिका की गरिमा और न्याय व्यवस्था में आम जनता के विश्वास को बनाए रखने के लिये **निम्नलिखित** सुधार किये जा सकते हैं-

- **अखिल भारतीय न्यायिक सेवा का गठन**

हाल ही में भारत के कानून मंत्री ने इस विषय पर विभिन्न राज्यों की राय जानने के लिये एक पहल की है। भारत में ऐसी सेवाओं के गठन का विचार सबसे पहले वर्ष 1960 के दशक में पेश किया गया था। ऐसी सेवाओं का निर्माण **अनुच्छेद- 312** के तहत किया जा सकता है। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि यह अधिकार सिर्फ राज्यसभा को ही प्राप्त है। ऐसी सेवाओं के निर्माण का प्रयास वर्ष 2012 में भी किया गया था। हालाँकि कुछ राज्यों और उच्च न्यायालयों द्वारा हमेशा से इसका विरोध किया जाता रहा है। यह विरोध प्रमुख रूप से दो वजहों से किया जाता है;

- पहली, राज्य अखिल भारतीय सेवाओं को संघीय व्यवस्था की दृष्टि से अपने अधिकारों का अतिक्रमण समझते हैं।
- दूसरी, भारत में विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती है। इस प्रकार की सेवाएँ न्यायाधीशों एवं जनता के माध्यम से संचार में रुकावट बन सकती है, जैसे- किसी तमिल भाषी व्यक्ति को ओडिशा में न्यायाधीश बना कर भेजा जाए।

उपर्युक्त आपत्तियों के बावजूद भारत में अखिल भारतीय न्यायिक सेवा निम्न रूप से उपयोगी है-

- **प्रथम**, इन सेवाओं में भी प्रशासनिक सेवाओं के समान निष्पक्ष एजेंसी के माध्यम से नियुक्ति होगी।
- **द्वितीय**, प्रतिभावान विधि स्नातकों को इन सेवाओं में शामिल किया जा सकेगा। चूँकि अभी ऐसी कोई सेवा अस्तित्व में नहीं है तो ऐसी प्रतिभा निजी संस्थाओं में आर्थिक लाभ की दृष्टि से आकर्षित हो जाती है।
- **तृतीय**, समय पर नियुक्ति एवं सही वेतन के कारण उचित व्यक्तियों को इन सेवाओं का अंग बनने के लिये आकर्षित किया जा सकेगा जिससे न्यायिक प्रक्रिया की तीव्रता और उसकी गुणवत्ता के साथ-साथ पारदर्शिता में भी वृद्धि होगी।

पदों की संख्या तथा वार्षिक कार्य दिवसों में बदलाव

भारत में न्यायाधीशों की भारी कमी है और यह एकीकृत न्यायपालिका के सभी स्तरों पर मौजूद है। जैसा कि हमने लेख की शुरुआत में बात की देश में 10 लाख की जनसंख्या पर 50 न्यायाधीशों की आवश्यकता है, किंतु वर्तमान में 10 लाख लोगों पर सिर्फ 18 न्यायाधीश ही है। ऐसे में किसी भी न्यायपालिका से समय पर न्याय देने की उम्मीद करना उचित नहीं हो सकता है। विधि आयोग की सिफारिश के अनुसार इन पदों की संख्या में वृद्धि किये जाने की आवश्यकता है। वर्तमान न्यायपालिका एकमात्र ऐसा सार्वजनिक संस्थान है जिसमें शीतकालीन एवं ग्रीष्मकालीन अवकाश की व्यवस्था है। **न्यायमूर्ति आर. एम. लोढ़ा** इस संदर्भ में अपनी चिंता व्यक्त कर चुके हैं कि न्यायपालिका को अपने कार्यभार को कम करने लिये 365 दिन खोला जाना चाहिये। न्यायालयों के कार्य दिवसों में वृद्धि एवं अवकाशों में कमी वर्तमान परिस्थितियों में एक प्रगतिशील कदम हो सकता है।

अन्य प्रयास

न्यायालय द्वारा कुछ अन्य नवाचारों को भी अपनाया जा सकता है जैसे- अमेरिका के पेंसिलवेनिया में रात्रिकालीन न्यायालय खुले रहते हैं हालाँकि भारत में भी इसी तरह का एक प्रयास गुजरात में वर्ष 2006 में हो चुका है। ऐसा प्रयोग अन्य राज्यों में भी किया जा सकता है। फास्ट ट्रैक कोर्ट और मोबाइल अदालतों का गठन एक अन्य प्रभावी उपाय हो सकता है। कुछ दीवानी मामलों के संबंध में मध्यस्थता के विचार को अपनाया जा सकता है। कुछ मामले, जैसे राजनीतिक नेताओं से संबंधित एवं गंभीर अपराधों से जुड़े मामलों के लिये विशेष न्यायालयों का गठन किया जाना चाहिये।

दृष्टि The Vision

वर्तमान समय में भारतीय न्यायपालिका विभिन्न चुनौतियों का सामना कर रही है। इन चुनौतियों से निपटने के लिये न्यायपालिका में सुधार की आवश्यकता है। यह सुधार न सिर्फ न्यायपलिका के बाहर से बल्कि न्यायपालिका के भीतर भी होने चाहिये। ताकि किसी भी प्रकार के नवाचार को लागू करने में न्यायपालिका की स्वायत्तता बाधा न बन सकें। साथ ही राज्यों को विश्वास में लेकर अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के गठन की संभावना को भी तलाशने का प्रयास किया जाना चाहिये ताकि न्याय की गुणवत्ता और पारदर्शिता में वृद्धि हो सके।

- न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति आयु बढ़ाने की फिलहाल कोई योजना नहीं
- केंद्र सरकार बनाम कॉलेजियम व्यवस्था
- मज़बूत लोकतंत्र में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका

प्रश्न- भारतीय न्यायपालिका वर्तमान समय में विभिन्न समस्याओं का सामना कर रही है, आपके विचार में ऐसी कौन-सी समस्याएँ है जिन्हें दूर किये जाने की आवश्यकता है?

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/india-next-generation-reforms-must-begin-in-courts-1